# प्रथमानुयोग व करणानुयोग का विद्वान बनाने वाली

# सम्यग्ज्ञान भूषण पदवी हेतु शिविर का आयोजन

## आगम अनुयोग प्रश्नोत्तर प्रदीप

दिनांक- 3 मई से 2 जून 2022 तक

पावन प्रेरणा- आचार्य गुरुदेव श्री आर्जवसागर जी महाराज

इस शिविर में भाग लेने वाले सभी उत्तीर्ण प्रतियोगीयों को प्रमाण पत्र भी दिया जाएगा।

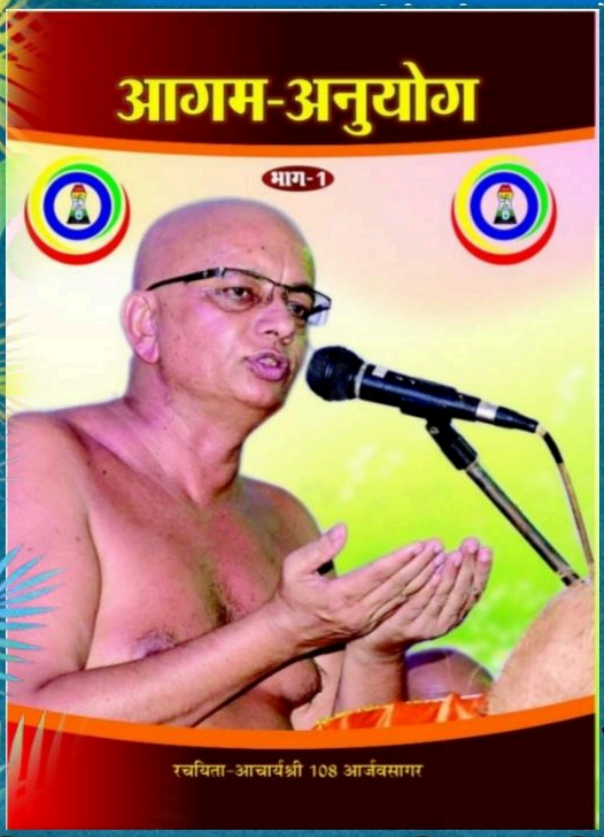


प्रतियोगिता में भाग लेने हेतु स्कैन करें
अथवा नीचे दिए नंबर पर सूचित करें...

whatspp no. 9174843674

**आयोजक-समस्त आर्जव वाणी एवं भाव विज्ञान परिवार,भोपाल**

# अध्याय - 3. तीर्थंकर ऋषभदेव का वैराग्यादि

**प्र. 201 तीर्थंकर ऋषभदेव राजन् ने दीक्षा पूर्व किन पारिवारिक लोगों से मोह का बंधन तोड़कर नग्न-दिगम्बरी-दीक्षा धारण की थी?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव राजन् ने प्रथम रानी नंदा (यशस्वती) तदोत्पन्न भरत आदिक शत पुत्र एवं ब्राह्मी पुत्री से तथा द्वितीय रानी सुनंदा तदोत्पन्न पुत्र बाहुबली और पुत्री सुन्दरी इन प्रमुख पारिवारिक लोगों से मोह का बंधन तोड़कर दिगम्बरी दीक्षा धारण की थी।

**प्र. 202 तीर्थंकर ऋषभदेव की दीक्षा के समय उनका साथ न छोड़ते हुए कितने राजाओं ने दिगम्बरी-दीक्षा धारण की थी?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के साथ उनके राज्य में रहने वाले चार हजार राजाओं ने दिगम्बरी दीक्षा धारण कर ली थी।

**प्र. 203 तीर्थंकर ऋषभदेव ने दीक्षा-धारण के समय कितने दिनों तक लिए योग-धारण कर लिया था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव ने दीक्षा-धारण करते ही छह माह तक का योग धारण कर लिया था।

**प्र. 204 तीर्थंकर ऋषभदेव छह माह के योग-धारण के समय कौन-से कार्य में लीन हो गये थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव छह माह के योग-धारण के समय छह माह के ही उपवास का नियम ग्रहण कर एक ही पद्मासन में बैठकर प्रतिमायोग-धारण कर निजात्मतत्त्व के गुण चिन्तवन रूप प्रशस्त-शुभध्यान में लवलीन हो गये थे।

**प्र. 205 तीर्थंकर ऋषभदेव के साथ दीक्षा-धारण करने वाले चार हजार मुनीश्वरों ने तीर्थंकर के मौनधारण पर किस तरह मुनि-क्रिया का अनुपालन किया?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के साथ दीक्षा-धारण करने वाले चार हजार मुनीश्वर तीर्थंकर के मौन-धारण पर उनके उपदेश के अभाव में मुनिचर्या का ज्ञान न हो सकने से तीर्थंकर के उपदेश की प्रतीक्षा करते हुए मन की शिथिलता के कारण भूख-प्यास की बाधा होने पर पेड़-पौधों के फलादिक एवं झरने का पानी सेवन कर और शीतादिक की बाधाओं में पेड़ों के पत्ते व छालादिक से तन को ढककर मनमानी चेष्टा के द्वारा सच्चे मार्ग से विमुख हो गये थे।

**प्र. 206 तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर सर्व प्रथम आहार चर्या को कब निकले एवं उन्हें किस तरह आहार का अलाभ हुआ?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर छह माह सम्बधी योग-धारण के उपवास के उपरान्त आहार-चर्या को नगर की ओर निकले लेकिन किसी ने उनकी नवधाभक्ति नहीं की, दातागण मात्र आहार इत्यादिक सम्बन्धी भोगोपभोग की सामग्री ग्रहण करने का आग्रह करते रहे, इस तरह विधिवत् भक्ति के अभाव में अलाभ रूप अंतराय मानकर वे तीर्थंकर मुनीश्वर वन की ओर लौट आये और ध्यान योग में लीन हो गये।

**प्र. 207 तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के लिए विधिवत्-नवधाभक्ति पूर्वक आहार का लाभ कितने दिनों के उपरान्त कब प्राप्त हुआ?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के लिए विधिवत् नवधाभक्ति पूर्वक आहार एक वर्ष एक माह और नौ दिनों के बाद वैशाख शुक्ला तृतीया के दिन प्राप्त हुआ।

**प्र. 208 तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के लिए आहारचर्या को जाने में एक वर्ष एक माह और नौ दिनों का समय क्यों लगा था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव ने दीक्षा धारण करते ही सर्वप्रथम छह माह का उपवास-धारण किया तदुपरान्त उन्हें आहार अलाभ रूप अंतराय हुआ एवं उन्होंने प्रतिदिन आहार चर्या को न जाते हुए सात माह और नौ दिनों के लिए पुनः योग-धारण के साथ उपवास ग्रहण का नियम धारण कर लिया था।

**प्र. 209 तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर प्रथम छह माह के योग धारण व उपवास के उपरान्त प्रतिदिन आहार-चर्या को क्यों नहीं निकले?**

उत्तर इसमें महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि सभी तीर्थंकर वर्द्धमान-चारित्र के धारक हुआ करते हैं, वे जो साधना पूर्व में कर चुकते हैं उससे आगे बढ़कर ही साधना या तपस्या किया करते हैं; कम नहीं। अतः तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर ने छह माह के उपवास के उपरान्त एक दिन की चर्या के समय नवधा भक्ति के ज्ञान के अभाव को देखकर अलाभ-अन्तराय मानकर हीयमान चारित्र रूप प्रतिदिन आहार-चर्या को न जाते हुए वर्द्धमान चारित्र के रूप में पुनः सात माह और नौ दिनों का योग धारण कर लिया था। यदि तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर छह माह के उपवास के बाद प्रतिदिन आहार को जाते तो वे वर्द्धमान-चारित्र वाले न कहलाकर हीयमान-चारित्र वाले कहलाते।

**प्र. 210 तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के लिए प्रथम पारणा के रूप से आहार-दान किस श्रावक द्वारा अपने राजमहल में दिया गया था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के लिए प्रथम पारणा के रूप से आहार-दान राजा श्रेयांस द्वारा अपने परिवार के साथ अपने राजमहल में दिया गया था।

**प्र. 211 किस नगर में राजा श्रेयांस द्वारा प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव ( आदिनाथ ) मुनीश्वर के लिए आहार दान दिया गया था?**

उत्तर हस्तिनापुर नगरी में राजा श्रेयांस द्वारा प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव (आदिनाथ) मुनीश्वर के लिए आहार दान दिया गया था।

**प्र. 212 राजा श्रेयांस ने अपने परिवार सहित कौन-सी वस्तु का आहार-दान तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के कर कमलों में देने का परम सौभाग्य प्राप्त किया था?**

उत्तर राजा श्रेयांस ने अपने परिवार सहित इक्षु रस का आहार-दान तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के कर कमलों में प्रदान करने का परम सौभाग्य प्राप्त किया था।

**प्र. 213 राजा श्रेयांस ने सहपरिवार किस तरह की नवधाभक्ति करके तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के**

**समक्ष आहार-दान विधि सानंद सम्पन्न की थी?**

उत्तर राजा श्रेयांस ने सहपरिवार 1. प्रतिग्रहण (पड़िगाहन), 2. उच्चासन 3. पाद प्रक्षालन 4. पूजन, 5. मनशुद्धि, 6. वचनशुद्धि, 7. कायशुद्धि 8. आहार-जल शुद्धि और 9. नमोस्तु इस तरह की नवधाभक्ति मन-वचन-काय पूर्वक करते हुए तीर्थंकर ऋषभदेव के समक्ष आहार दान-विधि सानन्द सम्पन्न की थी।

**प्र. 214 तीर्थंकर ऋषभदेव जब प्रथम बार आहार-चर्या को निकले थे तब राजा श्रेयांस ने नवधाभक्ति रूप आहार की विधि सम्पन्न क्यों नहीं की थी?**

उत्तर क्योंकि तब तक राजा श्रेयांस के लिए किन्हीं तीर्थंकर के तीर्थ अर्थात् दिव्यध्वनि रूप उपदेश के अभाव में नवधा-भक्ति करने के ज्ञान का अभाव था।

**प्र. 215 तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के दूसरी बार आहार-चर्या के लिए निकलने पर राजा श्रेयांस को कैसे नवधा-भक्ति का ज्ञान जागृत हुआ?**

उत्तर राजा श्रेयांस ने अपने पूर्व के आठवे भव में चक्रवर्ती वज्रजंघ (वर्तमान भव-ऋषभदेव) की पत्नी श्रीमती (वर्तमान भव राजा श्रेयांस) की पर्याय में दो मुनियों के लिए नवधाभक्ति पूर्वक आहार दिया था इस बात का स्मरण उन राजा श्रेयांस के जातिस्मरण (पूर्व भव की स्मृति) द्वारा हो गया था। अतः उन्होंने नवधा-भक्तिपूर्वक तीर्थंकर ऋषभदेव की आहार विधि सम्पन्न की थी।

**प्र. 216 राजा श्रेयांस के लिए ऐसे जातिस्मरण के होने में इतने अधिक दिन क्यों व्यतीत हुए; कुछ काल पूर्व ऐसा जातिस्मरण क्यों नहीं हुआ?**

उत्तर क्योंकि इतने काल के पूर्व राजा श्रेयांस के दानान्तराय कर्म का एवं ऋषभदेव मुनीश्वर के लाभान्तराय कर्म का क्षयोपशम नहीं हुआ था।

**प्र. 217 तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के प्रथम आहार की सानन्द सम्पन्नता पर किस तरह देव-गणों ने उत्सव मनाया?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के प्रथमाहार की सानन्द सम्पन्नता पर बड़ी भक्ति-भाव पूर्वक पञ्चाश्चर्य करते हुए महा उत्सव मनाया।

**प्र. 218 महामुनीश्वरों के आहार-दान के उपरान्त देवों द्वारा किये जाने वाले पञ्चाश्चर्य किस तरह सम्पन्न किये जाते हैं?**

उत्तर जिस तरह तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के लिए दिये आहार दानोपरान्त देवों ने आकाश से रत्नों की धारा पृथ्वी पर बरसाई थी, मंद-मंद सुगन्धित वायु बहाई थी, दिव्य पुष्पों की वृष्टि की थी, जय-जयकार रूप शब्दों द्वारा उच्च स्वरों में उद्घोष किया था और देव दुन्दुभि-वाद्यों से मधुर ध्वनि कर भव्यों को परमानन्द में अवगाहित कर पञ्चाश्चर्यों को सम्पन्न किया था। उसी तरह सर्व ऋद्धि आदिक से विशिष्ट महामुनीश्वरों के आहारोपरान्त देवगण पञ्चाश्चर्य किया करते हैं।

**प्र. 219 ऋद्धिधारक महामुनीश्वरों के लिए अर्पित किये गये आहारोपरान्त कम-से-कम और अधिक-**

**से-अधिक कितने दिव्य ( वेशकीमती ) रत्नों की वर्षा देवों द्वारा की जाती है?**

उत्तर ऋद्धिधारक महामुनीश्वरों के आहारोपरान्त देवों द्वारा कम-से-कम एक लाख पच्चीस हजार और अधिक-से अधिक साढ़े बारह करोड़ दिव्य रत्नों की वर्षा की जाती है। ( त्रि.महा.)

**प्र. 220 राजा श्रेयांस द्वारा दिये गये तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर को प्रथमाहार द्वारा चक्रवर्ती भरतेश्वर ने राजा श्रेयांस के लिए कौन-से तीन विशेषणों के साथ पुकारा था?**

उत्तर चक्रवर्ती भरतेश्वर ने राजा श्रेयांस के लिए प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव महामुनीश्वर के लिए प्रदान किये गये प्रथमाहार के महानन्दोत्सव पर तुम महादानपति हो, तुम दानतीर्थकृत हो और तुम महापुण्यभाग हो ऐसे इन तीन विशेषणों के साथ पुकारा था। (म.पु.)

**प्र. 221 प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव महामुनीश्वर के प्रथम आहार दान के शुभ दिन का नाम जगत् के भव्य बन्धुओं ने क्या घोषित किया था?**

उत्तर ऐसे महान प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव महामुनीश्वर के प्रथमाहारदान के शुभ दिन का शुभ नाम जगत् के भव्य जनों ने अक्षय तृतीया उद्घोषित किया था।

**प्र. 222 तीर्थंकरों के लिए दीक्षा-धारण करते ही कौन-कौन-सी ऋद्धियाँ प्रकट हो जाती हैं?**

उत्तर तीर्थंकरों के लिए दीक्षा-धारण करते ही 1. बुद्धि-ऋद्धि, 2. विक्रिया-ऋद्धि, 3. चारण-ऋद्धि, 4. तप-ऋद्धि, 5. बल-ऋद्धि, 6. औषध-ऋद्धि, 7. रस-ऋद्धि और 8. अक्षीण-ऋद्धि इस तरह मूल रूप से अष्ट ऋद्धियाँ प्रकट हो जाती हैं।

**प्र. 223 बुद्धि आदिक मूल अष्ट ऋद्धियों के उत्तर भेद कितने होते हैं?**

उत्तर बुद्धि आदिक मूल अष्टऋद्धियों के उत्तर भेद आगम में चौंसठ बतलाये गये हैं। (विशेष देखिये जै.सि.कोश)

**प्र. 224 बुद्धि-ऋद्धि के अठारह भेदों में एक भेद केवलज्ञान भी आता है तो क्या वे तीर्थंकर मुनि-पद धारण करते ही केवलज्ञान रूप ऋद्धि के भी स्वामी बन जाते हैं?**

उत्तर नहीं; ऐसा नहीं होता। इस जिज्ञासा का समाधान ऐसा है कि- तीर्थंकर जब मुनि-दीक्षा धारण करते हैं तब तत्काल ही उन्हें त्रेसठ ऋद्धियाँ अवश्य प्रकट हो जाती हैं लेकिन बुद्धि-ऋद्धि के अठारह भेदों में से एक केवलज्ञान ऋद्धि रूप भेद तब प्रकट होता है जब वे चार घातियाँ कर्मों का क्षयकर अरहंत-पद रूप अवस्था को प्राप्त करते हैं।

**प्र. 225 ऋद्धि और विद्याओं को क्या परिग्रह नहीं कहा जा सकता? और इनके माध्यम से मुनिपद बाधित नहीं होता क्या?**

उत्तर ऋद्धियों से मुनिपद बाधित नहीं होता और न ही वे परिग्रह रूप होती हैं क्योंकि वे तपस्या से प्राप्त आत्मिक शक्तियाँ हैं न कि कोई सेविकाएँ। विद्याओं से मुनिपद बाधित अवश्य होता है और उन्हें अपनाने से परिग्रह रूप पाप भी होता है क्योंकि वे सेविका ( दासी) रूप हुआ करती हैं।

**प्र. 226 बुद्धि-ऋद्धि के तेरहवें भेद दशपूर्वित्व में जो विद्यानुप्रवाद नामक पूर्व होता है उसके अध्ययन**

**के काल में मुनियों के सम्यक्त्व व उनके निराकांक्षा रूप परिणामों के परीक्षण हेतु जो महारोहणी आदि पाँच सौ महा-विद्याएँ तथा अंगुष्ठ, प्रसेन आदि सात सौ लघु विद्याएँ उपस्थित होती हैं तब वे मुनि अपरिग्रही कैसे बने रहते हैं?**

उत्तर जो वैरागी मुनि इन असंयमी देवी रूप विद्याओं की सेवा रूप प्रार्थना को अस्वीकार कर देते हैं वे सम्यक्त्व रूपी रत्न को सुरक्षित रखने वाले मुनि अभिन्न दशपूर्वित्व रूपी अवस्था को धारण करते हुए अपरिग्रही-संयमी कहलाते हैं और जो मुनि असंयमी स्त्रियों रूपी विद्याओं की सेवा स्वीकार कर लेते हैं वे वैराग्य-भाव से च्युत परिग्रही, असंयमी होते हुए अपने सम्यक्त्व रूपी रत्न को भी अथाह भवोदधि में गवाँ बैठते हैं।

**प्र. 227 क्या ऐसी असंयमी देवी रूपी विद्याओं को अपनाने वाला यति ही रुद्र कहा जाता है और उसकी करनी का क्या फल होता होगा?**

उत्तर हाँ! जो यति ऐसी असंयमी देवी रूप विद्याओं को स्वीकार कर व विषय-सेवन कर उनमें रमता है वह रुद्र कहलाता है, और वह निश्चित ही अपनी इस अशुभ करनी से अधो-पतन की राह द्वारा घोर दुःखों के द्वार अवश्य खोल लेता है।

**प्र. 228 अंग श्रुतधारक श्री धरसेनाचार्य ने जब मुनिवर पुष्पदन्त और भूतबली के लिए जो श्रुतज्ञान देने के पूर्व परीक्षणार्थ एक-एक श्लोक शुद्ध करने दिये थे और उनका ध्यान करते हुए उन मुनियों को दो देवियाँ दिखीं तो क्या इस कार्य को यह मानना अनुचित ही होगा कि उनका यह कार्य देवी सिद्धि के लिए था?**

उत्तर हाँ अनुचित ही होगा! क्योंकि गुरु-शिष्य का मन्तव्य देवी-सिद्धि का किञ्चत भी नहीं था। वे देवियाँ तो मात्र उनकी श्रुत-रक्षा रूप विशुद्धि के प्रभाव से यह संकेत दर्शाने उपस्थित हुईं थीं कि इन श्लोकों में जो विकलता है वे हमारे शरीर (एक आँख और एक दांत बाहर) रूप विकलता को देखकर, सही अर्थ ग्रहण कर अपनी बुद्धि के अनुरूप श्लोकों को शुद्ध कर लें। इस तरह न वे देवियाँ सिद्ध की गईं थीं और न वे विषय रमण या चिरकाल को स्थायी बनने आयीं थी बल्कि वे स्वत: उपस्थित होकर श्लोकों की शुद्धि होते ही वास्तविक रूप प्रकट कर तत्काल ही यथास्थान प्रस्थान कर गईं।

**प्र. 229 संयमी और महान व्रतों के धारक महाव्रती मुनि जनों के प्रति असंयमी सरागी देवी-देवताओं को वश में करने के कार्य की कल्पना करना कौन-से अनर्थ का कारण है?**

उत्तर जब एक सामान्य सम्यग्दृष्टि भव्यजीव सरागी देवी-देवता की उपासना को मिथ्यात्व मानता है तब इन महा सम्यग्ज्ञानी भव्य मुनीश्वरों के साथ देवादिक की सिद्धि या वश करने की कल्पना करना उन महाव्रतियों को दासी-दास का परिग्रही बनाते हुए महामिथ्यात्व-पोषक महाअज्ञान या घोर मूढ़ता रूप अनर्थ क्यों नहीं माना जावेगा? अर्थात् अवश्य ही माना जावेगा।

**प्र. 230 विद्याधर गृहस्थ मनुष्य तो विद्याओं के स्वामी कहे जाते हैं; तो क्या वे सभी मिथ्यादृष्टि होते हैं या सम्यग्दृष्टि?**

उत्तर सभी विद्याधर मिथ्यादृष्टि नहीं होते; जो सरागियों की उपासना कर विद्याओं की प्राप्ति करते हैं वे विद्याधर मिथ्यादृष्टि कहे जाते हैं, लेकिन जो बिना प्रयास ही जाति व कुल आदिक से विद्याओं की प्राप्ति कर वीतराग जिनेन्द्र देव, जिनवाणी और निर्ग्रन्थ गुरुओं की ही आराधना करते हुए सहज प्राप्त विद्याओं का धर्म या सदुपकार के निमित्त प्रयोग किया करते हैं वे विद्याधर सम्यग्दृष्टि कहलाते हैं।

**प्र. 231 सेवा इत्यादिक कार्य करने वाली परिग्रह रूप विद्याएँ गृहस्थों के जीवन में कौन-सी अवस्था तक रह सकती हैं?**

उत्तर मोक्ष में बाधक भिन्न पदार्थरूप परिग्रह पाप रूप होते हुए भी गृहस्थों के जीवन में न्याय-शीलता के साथ एक सीमा में सीमित रहते हुए पंचम गुणस्थान तक रह सकता है।

**प्र. 232 इसी कारण-वश क्या कोई-कोई श्रावक क्षुल्लक जैसी अवस्था में भी विद्याओं का प्रयोग पूर्व काल में किया करते थे?**

उत्तर हाँ! पूर्व प्राप्त विद्याओं को अणुव्रत-धारक पंचमगुणस्थानवर्ती क्षुल्लक कदाचित् उन विद्याओं को आज्ञा दे धर्म कार्य किया करते थे; परन्तु मुनि दीक्षा लेने के पूर्व ही उन विद्याओं का त्याग कर दिया करते थे।

**प्र. 233 जिनदत्त श्रेष्ठी श्रावक के लिए विद्या की प्राप्ति किस कारण हुई थी?**

उत्तर जिनदत्त श्रेष्ठी श्रावक के दृढ़तायुत ध्यान को देखकर बिना कांक्षा (चाहना) के ही देवों द्वारा आकाशगामिनी विद्या प्रदान की गई थी जिससे वे मेरुपर्वत के अकृत्रिम जिनालयों के नित्य दर्शन आदिक किया करते थे।

**प्र. 234 अञ्जन चोर को विद्या की प्राप्ति का कारण क्या था और वह विद्या कब तक रही?**

उत्तर जिनदत्त श्रेष्ठी श्रावक द्वारा प्रमाणित और प्रसारित किये गये अनादि व अनिधन णमोकार मंत्र पर श्रद्धा कर उसे ध्याते हुए अञ्जन चोर के लिए प्राप्त हुई आकाशगामिनी विद्या उसे मेरु पर्वत पर स्थित अकृत्रिम जिनालयों के दर्शनार्थ ले गई थी और वहाँ विराजित मुनिराज के उपदेश से दीक्षा लेते समय उसने उस परिग्रह रूप विद्या का भी त्याग कर दिया था तथा तप से प्राप्त चारण ऋद्धि द्वारा अञ्जन मुनि ने कैलाश पर्वत पर आकर वहाँ से शुक्ल-ध्यान द्वारा सर्व अष्ट-दुष्ट कर्मों का क्षय कर निर्वाण रूप मोक्ष पद को प्राप्त कर लिया था।

**प्र. 235 तीर्थंकर-पदधारी मुनिवर को आत्मिक शक्ति रूप प्राप्त ऋद्धियों के माध्यम से जगजन क्या लाभ लेते होंगे?**

उत्तर ऐसी तीर्थंकर जैसी आत्माएँ जब दूर-सुदूर तक अपनी चारण ऋद्धि द्वारा आकाश में ऊँचाई से गमन करते हैं तब स्वपर कल्याण करते हैं; जैसे कि अक्षीण-महानस ऋद्धि द्वारा आहार अक्षीणता (वृद्धि) हो जाना, नीरसाहार भी सरस हो जाना, अक्षीण महालय ऋद्धि से लघुस्थान भी (गुफा जैसा स्थान भी) बड़ा विशाल हो जाना, उनके शरीर से अन्य शरीर को बाधा उत्पन्न न होना, उनके शरीर के प्रभाव से अन्य जीवों के रोगादिक का पलायन होना और सम्पूर्ण लोक के पदार्थों के ज्ञान से दिव्य-ध्वनि द्वारा

सम्पूर्ण जगत् के भव्य जीवों के लिए मोक्षमार्ग का उपदेश प्राप्त होना इत्यादिक अनेकों लाभ होते हैं।

**प्र. 236 विष्णुकुमार मुनि ने तप से प्राप्त ऋद्धि द्वारा क्या उपकार कर लोक प्रशंसित कार्य किया था?**

उत्तर विष्णुकुमार मुनि ने तप से प्राप्त विक्रिया ऋद्धि द्वारा अपने शरीर को विस्तृत बना कर एक पग मेरु पर्वत पर व एक पग मानुषोत्तर पर्वत पर रखने वाला बनाकर बलि राजा का मान खण्डित कर अकंपनाचार्य आदि सात सौ मुनियों की रक्षा करते हुए बड़ा ही लोक प्रशंसित कार्य किया था।

**प्र. 237 विद्या का एक अर्थ कोई अन्य देवी इत्यादिक न होते हुए मात्र ज्ञान रूप होता है; तो ज्ञान रूप विद्याएँ जो आत्मिक शक्तिरूप होती हैं वे मुनियों के जीवन में परिग्रह रूप न होते हुए किस रूप होती होंगी?**

उत्तर वे ज्ञान रूप विद्याएँ महामुनियों के जीवन में अन्तरिक्ष, भौम, स्वर, स्वप्न, लक्षण, व्यंजन व छिन्न (चिह्न) रूप अष्ट महानिमित्त की भेदवाली अंग-ज्ञान रूप हुआ करती हैं तथा वे महाज्ञानी मुनिवर इस ज्ञान रूप विद्या का प्रयोग लौकिक कार्यों के लिए कदापि नहीं करते क्योंकि वे विशुद्ध सम्यग्दृष्टि हुआ करते हैं।

**प्र. 238 तीर्थंकर ऋषभदेव ने दीक्षा से पूर्व सर्वप्रथम जिन विद्याओं द्वारा ब्राह्मी और सुन्दरी पुत्रियों के ऊपर उपकार किया था वे ज्ञान-विद्यायें कौन सी थी?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव ने दीक्षा के पूर्व प्रथम पुत्री ब्राह्मी के लिए लिपि विद्या और द्वितीय पुत्री सुन्दरी के लिए अंक विद्या सिखलाकर उनका महान उपकार किया था।

**प्र. 239 तीर्थंकर ऋषभदेव ने दीक्षा पूर्व अपने गृहस्थ जीवन में जन सामान्य को षट् कर्मादिक का उपदेश देकर कितने वर्षों तक कर्मभूमि की उत्तम-व्यवस्था में अपने अमूल्य-जीवन के समय का सदुपयोग किया था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव ने दीक्षा-पूर्व अपने गृहस्थ जीवन में जनसामान्य के लिए तेरासी लाख पूर्व वर्ष तक षट्-कर्मादिक का उपदेश देकर कर्मभूमि की उत्तम-व्यवस्था में अपने अमूल्य-जीवन के समय का सदुपयोग किया था।

**प्र. 240 तीर्थंकर ऋषभदेव के दीक्षोपरान्त छदमस्थ अवस्था में कितने वर्ष तपस्या में व्यतीत हुए थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के दीक्षोपारान्त छदमस्थ अवस्था में एक हजार वर्ष तपस्या में व्यतीत हुए थे।

**प्र. 241 तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के लिए केवलज्ञान की उत्पत्ति किस स्थल पर हुई थी?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभवदेव मुनीश्वर के लिए केवलज्ञान की उत्पत्ति पर्वतालपुर के निकट हुई थी।

**प्र. 242 तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के लिए केवलज्ञान किस वृक्ष के नीचे उत्पन्न हुआ था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के लिए केवलज्ञान वट वृक्ष के नीचे उत्पन्न हुआ था।

**प्र. 243 केवलज्ञानोत्पत्ति होते ही तीर्थंकर अरिहंत इस धरातल से कितने हस्त ऊपर उठ जाया करते हैं और जहाँ से उनकी वाणी खिरना, व गमन-विराजमान रूप क्रिया हुआ करती है?**

उत्तर केवलज्ञानोत्पत्ति होते ही तीर्थंकर अरिहंत का शरीर इस सामान्य धरातल से पाँच हजार धनुष अर्थात्

बीस हजार हस्त (हाथ) ऊपर उठ जाता है और उतनी ऊँचाई से ही उनकी वाणी खिरना व गमन-विराजित होने रूप क्रिया सम्पन्न होती है।

**प्र. 244 तीर्थंकर अरिहंतों का शरीर इस सामान्य धरातल ( भूमि ) से पाँच हजार धनुष ऊपर की ओर क्यों उठ जाता है? क्या इसमें कोई विशेष रहस्य है?**

उत्तर जगत् में विशिष्ट आत्माओं का स्थान सर्वोपरि होता है, यह अवस्था लोक शिखर तक जाने वाले भावि सिद्ध उन अरिहन्तों भगवन्तों की होती है, तीर्थंकर प्रभु कैवल्य उपलब्धि के उपरान्त परम शुद्ध एवं इतने विशिष्ट आत्मा सुनिश्चित होते हैं कि उन्हें कोई अभव्य और मिथ्यादृष्टि जैसे पुण्यहीन प्राणी देखने में बड़े अभागे होते हैं; इतदर्थ उनका शरीर स्वयमेव पाँच हजार धनुष की ऊँचाई पर चला जाता है।

**प्र. 245 तीर्थंकर केवली का दर्शन कौन-से पुण्यवान व भाग्यवान जीव कर पाते हैं?**

उत्तर तीर्थंकर केवली का दर्शन जो जीव भव्यत्व के साथ सम्यक्त्व को प्राप्त करते हैं ऐसे वे ही बड़े पुण्यवान व भाग्यवान प्राणी कर पाते हैं।

**प्र. 246 साक्षात् तीर्थंकर-केवली भगवान का दर्शन कौन-कौन से प्राणी नहीं कर पाते?**

उत्तर आगम-ग्रन्थों में वर्णित है कि साक्षात् तीर्थंकर-केवली भगवान का दर्शन अभव्य जीवों, मिथ्यादृष्टि जीवों, सासादन गुणस्थानवर्ती जीवों एवं मिश्रगुणस्थानवर्ती जीवों को नहीं होता। (मुनिसुव्रत का.4-130)

**प्र. 247 अभव्य व मिथ्यादृष्टि आदिक जीवों को तीर्थंकर-केवली भगवान के साक्षात् दर्शनार्थ निकट जाने में कौन बाधक बन जाता है और वे दर्शन से वंचित किस तरह-से रह जाते हैं?**

उत्तर अभव्यों व मिथ्यादृष्टि आदिक जीवों को साक्षात् तीर्थंकर-केवलियों के दर्शन में बाधक उनका मोहनीय व दर्शनावरणीय आदिक कर्म ही समझना चाहिए, जिस कारण अभव्य मिथ्यादृष्टि आदिक जीव प्रभु के समवसरण के निकटस्थ प्रथम परकोट धूलिसाल सम्बन्धी विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित नामक चार द्वारों के समीप पहुँचते ही उन्हें समवसरण में विराजित तीर्थंकर प्रभु तक पहुँचाने वाली वीथियों रूप मार्ग नजर ही नहीं आता तथा वे अन्धे सदृश हो जाते हैं और समवसरण के बाहरी भाग से ही वापस लौट आते हैं।

**प्र. 248 भव्य, सम्यग्दृष्टि जीव किस तरह बीस हजार हाथ ऊपर जाकर साक्षात् तीर्थंकर केवली का दर्शन करते होंगे?**

उत्तर स्वर्गिक सौधर्मेन्द्र की आज्ञा पाकर कुबेरेन्द्र इस भूमि पर रत्नमय एक विशाल धर्मसभा रूप भव्यों को शरण देने वाला समवसरण रूप वैभव रचाता है जिसमें तीर्थंकर प्रभु के निकट तक पहुँचने हेतु बीस हजार सीढ़िया रची जाती हैं, जिन रत्नमय सीढ़ियों को भव्य सम्यग्दृष्टि जीव बिना परिश्रम ही थोड़े-से पुरुषार्थ के माध्यम से चढ़ जाया करते हैं और उन पुण्यभागी भाग्यशालियों को सहज ही उन त्रिलोकीनाथ तीर्थंकर केवली प्रभु का साक्षात् दर्शन हो जाया करता है।

**प्र. 249 अरिहंत केवली भगवन्तों की गमनादिक क्रिया क्या उनकी इच्छा पूर्वक हुआ करती है या भव्यों के पुण्य के वश हुआ करती है?**

उत्तर अरिहंत केवली भगवन्तों की गमन, बैठना और वाणी खिरने रूप क्रिया स्त्रियों की माया व मेघों के गमन सदृश स्वाभाविक रूप से भव्य जीवों के पुण्य के निमित्त और जग उपकारार्थ उनकी बिना इच्छा के ही हुआ करती है। (प्र.सा. 1.44)

**प्र. 250 केवली भगवान की इच्छा रूप प्रवृत्ति होने में क्या बाधा है?**

उत्तर इच्छा का प्रकट होना एक तरह का राग-भाव है और जो राग भाव मोहनीय कर्म में गर्भित होता है, जब तेरहवें गुणस्थानवर्ती भगवान मोहनीय कर्म का क्षय दसवें गुणस्थान में ही कर चुके होते हैं तब उनके जीवन में किसी भी तरह की इच्छा प्रकट होने की कल्पना करना व्यर्थ ही समझना चाहिए।

**प्र. 251 तीर्थंकर ऋषभदेव के केवलज्ञानोत्पत्ति का हर्ष देवों ने व प्रकृति ने किस तरह प्रकट किया था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव ने जब घातिया कर्मों पर विजय प्राप्त की तब संसार भर में शान्ति छा गई। सुरलोक में शीघ्र ही जिनेन्द्रदेव के केवलज्ञान का समाचार ज्ञात हो गया। कल्पवासियों के विमानों में घंटानाद, ज्योतिषी देवों के यहाँ सिंहनाद, व्यन्तरों के यहाँ भेरीनाद तथा भवनवासियों के यहाँ भी स्वत: शंख-ध्वनि होने लगी। इन्द्रों के आसन डोलने लगे, मानों जिनेन्द्र देव द्वारा घातिया कर्मों के जीते जाने पर देवों को जो गर्व हुआ था, उसे वे सहन करने में असमर्थ हो आसन-सह दोलायित होते हुये कम्पायमान होने लगे। कल्पवृक्षों से दिव्य-पुष्पों की वर्षा हो रही थी मानों वे प्रभु को पुष्पांजलि अर्पित कर रहे हों। दिशायें धुएँ व धूलादि रहित निर्मल हो गईं थीं। आकाश मेघों से रहित हो गया था। मंद-मंद सुगंधित और शीतल वायु बह रही थी। ऐसे मनोरम वातावरण में देवगण व मनुष्य आदिक उन जिनेन्द्र प्रभु को भक्ति भाव-सह वंदन कर रहे थे।

**प्र. 252 देव-गणों ने किस तरह तीर्थंकर ऋषभदेव का केवलज्ञान कल्याणक बड़े वैभव-सह मनाया था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव को कैवल्य प्राप्ति होते ही सर्व प्रथम सौधर्मेन्द्र ने स्वर्ग से ही आनंदित होकर उन जिनेन्द्र देव की परोक्ष में वंदना की। तदनन्तर सौधर्मैशानेन्द्र अपनी-अपनी शची के साथ ऐरावत गज पर आरूढ़ होकर अयोध्या नगरी की ओर प्रस्थान करते हैं। इसी तरह सभी देवगण स्व-स्व विमानों में बैठकर अयोध्या नगरी पहुँचते हैं। सौधर्मेन्द्र की आज्ञा पा कुबेरेन्द्र सूर्य मण्डल के समान गोल इन्द्रनील मणिमयी बारह योजन प्रमाण विस्तार वाली भूमि रचकर उसके ऊपर समवसरण की रचना करता है। देवों के अद्भुत् कौशल तथा तीर्थंकर प्रकृति के निमित्त से आदिनाथ ऋषभदेव प्रभु का समवसरण सौन्दर्य, वैभव तथा श्रेष्ठ कला का अद्भुत केन्द्र था। ऐसे महान समवसरण में पहुँचकर देवेन्द्र तीर्थंकर प्रभु की सविनय नमस्कार पूर्वक स्तुति करता है और अष्ट महामंगल द्रव्यों से उनकी पूजा रचाता है तथा अष्ट भूमि व बारह सभा युक्त समवसरण की शरण में अपने को धन्य मानते हुए सभी भव्य गणों-सह इन्द्र प्रभु की अमृतमय दिव्य वाणी को सुनकर केवलज्ञान कल्याणक मनाता है।

**प्र. 253 सौधर्मेन्द्र ने किस देव के लिए ऐरावत गज का रूप धारण करने की आज्ञा प्रदान की थी?**

उत्तर सौधर्मेन्द्र ने नागदत्त नामक आभियोग्य जाति के स्वर्गिक देव के लिए ऐरावत गज का रूप धारण करने की आज्ञा प्रदान की थी।

**प्र. 254 तीर्थंकर ऋषभदेव प्रभु के विशाल समवसरण का विस्तार कितना था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के विशाल समवसरण का विस्तार बारह योजन था।

**प्र. 255 क्या सर्व तीर्थंकरों के समवसरण का विस्तार एक सदृश होता है या कोई विशेषता है?**

उत्तर ऋषभनाथ तीर्थंकर भगवान के बारह योजन समवसरण के विस्तार से शेष अजितनाथ से लेकर बाईसवे नेमिनाथ तक के तीर्थंकरों के समवसरण का विस्तार आधा-आधा योजन कम था। पार्श्वनाथ तीर्थंकर का समवसरण सवा योजन तथा भ. महावीर का समवसरण एक योजन विस्तार वाला था।

**प्र. 256 विदेह क्षेत्रस्थ तीर्थंकरों के समवसरण का विस्तार कितना होता है?**

उत्तर विदेह क्षेत्रस्थ तीर्थंकरों की शारीरिक अवगाहना पाँच सौ धनुष प्रमाण होती है, अत: वहाँ के समवसरणों का विस्तार नियम से बारह योजन प्रमाण होता है ऐसा आगम है।

**प्र. 257 तीर्थंकर प्रभु के समवसरण का संक्षिप्त परिचय किस तरह का है?**

उत्तर समवसरण के बाह्य भाग में सर्वप्रथम धूलिसाल परकोट जो रत्नों की धूलि से निर्मित होता है। इस धूलिसाल के बाहर चारों दिशाओं में स्वर्णमय खंभों के अग्रभाग पर अवलंबित चार तोरण द्वार शोभायमान होते हैं। धूलिसाल के भीतर जाने पर कुछ दूरी पर चारों दिशाओं में एक-एक मानस्तम्भ होते हैं। वे मानस्तम्भ बड़े ऊँचे घण्टाओं से घिरे, और चँवर तथा ध्वजाओं से शोभायमान होते हैं। ऐसे दिव्य मानस्तम्भों के मूल भाग में जिनेन्द्र भगवान् की सुवर्णमय प्रतिमाएँ विराजित होती हैं, जिनकी इन्द्रगण क्षीरसागर के जल से अभिषेक कर पूजन किया करते हैं। उन मानस्तम्भों में श्रीजिन के मस्तक पर छत्रत्रय शोभित होते हैं। प्रत्येक मानस्तम्भ की चारों दिशि में चार सरोवर निर्मल जल से पूरित होते हैं मानों वे तन के मैल सह कर्म-मैल को धोया करते हैं।

फिर निर्मल जल से पूर्ण खातिका होती है। पश्चात् पुष्पवाटिका होती है। अनन्तर प्रथम कोट होता है। पश्चात् दो-दो नाट्य शालायें होती हैं। उसके अनन्तर अशोक आदि वृक्षों का वन होता है। उसके आगे वेदिका होती है। तदनन्तर ध्वजाएँ शोभित होती हैं। इनके पश्चात् दूसरा कोट होता है। फिर वेदिका सह कल्पवृक्षों का वन होता है। तदनन्तर स्तूप होते हैं और फिर भवनों की पंक्तियाँ शोभित होती हैं।

इसके अनन्तर स्फटिक मणि से रचित तीसरा परकोटा होता है। उसके बाद मुनि, राजादि मनुष्य और देवादिकों की बारह सभाएँ हुआ करती हैं और अंत में गोल तीन कटनी रूपी पीठिका के ऊपर सहस्रदल स्वर्णिम कमल फिर रत्नजड़ित सिंहासन से अधर में स्वयंभू तीर्थंकर अरहंत-देव विराजित होते हैं। इस तरह यह समवसरण का संक्षिप्त परिचय है।

**प्र. 258 एक अपेक्षा से समवसरण में ग्यारह भूमियाँ कौन-सी होती हैं?**

उत्तर समवसरण में 1. चैत्यभूमि, 2. खातिकाभूमि, 3. लताभूमि, 4. उपवनभूमि, 5. ध्वजाभूमि, 6. कल्पांगभूमि, 7. गृहभूमि, 8. सद्गुणभूमि, 9. प्रथम मेखला (कटनी) भूमि, 10. द्वितीय मेखला भूमि और 11. तृतीय मेखला भूमि।

**प्र. 259 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में कितने गणधर मुनि विराजित थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में चौरासी गणधर मुनि विराजित थे।

**प्र. 260 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में कितने केवली मुनिवर विराजित थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में बीस हजार केवली मुनि विराजित थे।

**प्र. 261 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में कितने अवधिज्ञानी मुनि विराजित थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में नौ हजार अवधिज्ञानी मुनि विराजित थे।

**प्र. 262 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में कितने शिक्षक मुनि विराजित थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषदेव के समवसरण में चार हजार एक सौ पचास शिक्षक मुनि विराजित थे।

**प्र. 263 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में कितने मन:पर्ययज्ञानी मुनि विराजित थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में बीस हजार सात सौ पचास मन:पर्ययज्ञानी मुनि विराजित थे।

**प्र. 264 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में कितने विक्रिया ऋद्धिधारक मुनि विराजित थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में बीस हजार छह सौ विक्रिया ऋद्धि धारक मुनि विराजित थे।

**प्र. 265 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में कितने अनुत्तरवादी मुनि विराजित थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में बीस हजार सात सौ पचास अनुत्तरवादी मुनि विराजित थे।

**प्र. 266 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में कितने अंग-पूर्व के ज्ञाता (श्रुतकेवली) मुनिराज विराजमान थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में चार हजार सात सौ पचास अंग-पूर्व के ज्ञाता (श्रुतकेवली) मुनिराज विराजमान थे।

**प्र. 267 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में कितने सामान्य मुनिराज विराजमान थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में चौरासी हजार सामान्य मुनिराज विराजमान थे।

**प्र. 268 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में आर्यिकाओं की कितनी संख्या थी?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में आर्यिकाओं की संख्या तीन लाख पचास हजार थी।

**प्र. 269 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में श्रावकों एवं श्राविकाओं की कितनी संख्या थी?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में श्रावकों की संख्या तीन लाख एवं श्राविकाओं की पाँच लाख थी।

**प्र. 270 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में देवगति के देव-देवियाँ कितने थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में देवगति सम्बन्धी देव और देवियाँ असंख्यात थे।

**प्र. 271 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में तिर्यञ्च प्राणी कितने थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में तिर्यञ्च प्राणी संख्यात थे।

**प्र. 272 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में प्रमुख श्रोता का नाम क्या था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में प्रमुख श्रोता का नाम भरत चक्रवर्ती था।

**प्र. 273 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में प्रमुख गणधर मुनि कौन थे?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में प्रमुख गणधर मुनिवर वृषभसेन थे।

**प्र. 274 तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में प्रमुख आर्यिका कौन थी?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के समवसरण में प्रमुख आर्यिका ब्राह्मी थी।

**प्र. 275 तीर्थंकरों के समवसरण में प्राणियों के लिए कौन-कौन-सी बाधाएँ और क्यों उत्पन्न नहीं होती?**

उत्तर तीर्थंकरों के समवसरण में आतंक, रोग, शोक, प्रसव, निद्रा, बैर, काम, भूख और प्यासादिक की बाधाएँ तीर्थंकर प्रभु के पुण्य के महाप्रताप से उत्पन्न नहीं होती।

**प्र. 276 समवसरण में नवमी भूमि रूप प्रथम मेखला ( कटनी ) क्या विशेषता वाली होती है?**

उत्तर समवसरण में नवमी भूमि रूप प्रथम मेखला-पीठिका पर स्थित अष्टमंगल द्रव्य अतिशय शोभायमान होते हैं तथा सुन्दर यक्षों के ऊँचे-ऊँचे मस्तकों पर स्थित धर्मचक्र उदयाचल से उदित होते हुए सूर्य बिम्ब सदृश प्रतिभासित होते हैं।

**प्र. 277 समवसरण में दसमी भूमि रूप द्वितीय मेखला क्या विशेषता वाली होती है?**

उत्तर समवसरण में दसमी भूमि रूप द्वितीय मेखला-पीठिका पर चक्र, गज, वृषभ, कमल, अश्व, सिंह, गरुड़ तथा माला के चिह्न से चिह्नित आठों दिशि में आठ विस्तृत ध्वजाएँ शोभायमान होती हैं।

**प्र. 278 समवसरण में ग्यारहवीं भूमि रूप तृतीय मेखला क्या विशेषता वाली होती है?**

उत्तर समवसरण में ग्यारहवीं भूमि रूप तृतीय मेखला-पीठिका सर्व रत्नों और मोतियों के हारों से सुसज्जित होती है जिस मेखला के बीचो-बीच चहुँदिशि में मधुर गंध को बिखराने वाली गंधकुटी इस तरह भासित होती है मानो तीर्थंकर प्रभु का परमौदारिक शरीर ही अष्ट-गंध के रूप में अपनी सुगन्धि से भव्यों को संतृप्त कर रहा हो तथाहि ऐसी मनहारी गंधकुटी के मध्य सहस्रदल स्वर्णिम कमल एवं जिस पर रत्न जड़ित सिंहासन अतिशय-शोभाश्री को बढ़ाने वाला होता है और जिस सिंहासन में चतुरंगुल ऊपर अधर में तीर्थंकर प्रभु विराजित होते हैं। ऐसी मनभावन तृतीय मेखला होती है।

**प्र. 279 तीर्थंकर केवली के सिर पर कौन-से देवों द्वारा कितने चँवर ढुराये जाते हैं?**

उत्तर तीर्थंकर केवली के सिर पर आजू-बाजू से कटक, कटि सूत्र, कुण्डल और मुकुटादि अलंकारों से परिपूर्ण सुन्दर यक्षों द्वारा चौसठ चँवर ढुराये जाते हैं।

**प्र. 280 सुन्दर आभरणों से युक्त यक्ष क्या तीर्थंकरों मात्र की चँवर ढोरकर सेवा करते हैं या अन्य पुण्यवान मनुष्यों की भी चँवर ढोरकर सेवा करते हैं? और अन्य पुण्यवान कौन-कौन-से मनुष्यों के सिर पर कितने-कितने चँवर ढोरते हैं?**

उत्तर आभरणों से सुन्दर यक्ष चक्रवर्तियों पर सदाकाल बत्तीस चँवर ढोरते हैं। अर्धचक्रवर्ती (नारायण-

प्रतिनारायण) पर सोलह चँवर ढोरते हैं। महामण्डलेश्वर राजाओं पर आठ चँवर ढोरते हैं। मण्डलेश्वर राजा पर चार चँवर ढोरते हैं और महाराजाओं पर दो चँवर ढोरते हैं। इस तरह यक्ष देव मनुष्यों की भी बड़ी मनोभावना से सेवा पूर्ण करते हैं।

**प्र. 281 तीर्थंकरों के समवसरण में प्रभु के भामण्डल ( प्रभामण्डल ) की क्या महिमा होती है? उसके रहस्य को बतलाइये?**

उत्तर त्रिलोक के प्रकाशमान पदार्थों के तेज को तिरस्कृत करने वाला अथवा अमृत सदृश निर्मल और जगत् को अनेक मंगल रूप दर्पण के समान भगवान् की देह के प्रभामण्डल में भव्यात्माओं के सप्त-सप्त भव दर्शित होते हैं ऐसे महातेज पुञ्ज रूप प्रभामण्डल के कारण समवसरण में रात्रि और दिन का कोई भेद नहीं रहता है।

**प्र. 282 समवसरण में स्थित मानस्तम्भों की चारों दिशाओं सम्बन्धी सरोवरों या बाबड़ियों में भी आगे, पीछे के तीन-तीन और वर्तमान का एक भव दर्शित होने का वर्णन मिलता है। परन्तु जिन जीवों के मोक्ष होने में एक, दो भव ही शेष हैं तो उन्हें क्या नियम लागू होगा?**

उत्तर जिन जीवों के एक, दो भव ही शेष रहते हुए मोक्ष पाना निकट होता है वे जीव कल्याण में निमित्त भामण्डल में उतने ही भव देखते हुए वैराग्य-भाव का चिन्तवन मन में लाकर शीघ्र मोक्ष-पुरुषार्थ करने में उत्सुक हो जाते हैं। उन्हें चार, पाँच अथवा छह भवों के दिखने का नियम भी लागू हो सकता है।

**प्र. 283 समवसरण-विराजित सहस्रसूर्य-सम प्रतापी प्रभु को निहारने में आँखे कैसे सक्षम होंगी क्या अश्रुपात नहीं होने लगेगा?**

उत्तर नहीं ऐसा नहीं होता, जैसे-प्रभु का रूप सहस्र सूर्यों से भी अधिक प्रतापी होता है वैसे ही सहस्रचन्द्रों से भी अधिक शीतल होता है अत: नयन प्रसन्नता का ही अनुभव करते हैं, न कि किसी तरह के कष्ट का अनुभव करते हैं।

**प्र. 284 तीर्थंकर केवली की दिव्यध्वनि कितनी भाषाओं में खिरती है?**

उत्तर तीर्थंकर केवली की दिव्यध्वनि अठारह महाभाषाओं और सात सौ लघु भाषाओं में खिरती है।

**प्र. 285 जिनेन्द्र देव- केवली प्रभु की वाणी रूप दिव्य-ध्वनि के लिए सार्वार्धमागधी भाषा क्यों कहा जाता है?**

उत्तर जिनेन्द्र देव-केवली प्रभु की वाणी रूप दिव्यध्वनि लोक के सर्व जीवों की हितकारक होने से 'सार्व' कही जाती है और मागध नामक देवों द्वारा भिन्न-भिन्न भव्य जीवों के कर्णप्रदेशों के समीप तक सरलता पूर्वक पहुँचायी जाने वाली होने से 'मागधी' भाषा कहलाती है।

**प्र. 286 जिनेन्द्र देव से खिरी दिव्य-ध्वनि की क्या महत्त्वपूर्ण विशेषता होती है?**

उत्तर जिनेन्द्र-देव से खिरी दिव्यध्वनि गम्भीर, मधुर, अत्यन्त मनोहर, निष्कलंक, कल्याणकारी, कण्ठओष्ठ-तालु आदि वचन उत्पत्ति के निमित्त कारणों से रहित, पवन के रोध बिना उत्पन्न हुई, स्पष्ट, श्रोताओं के लिए अभीष्ट तत्त्वों का निरूपण करने वाली सर्वभाषा स्वरूप, समीप तथा दूरवर्ती

जीवों के लिए समान रूप से सुनाई पड़ने वाली, शांति-रस से परिपूर्ण तथा उपमा रहित ऐसी अनुपम जिनेन्द्र प्रभु की दिव्यध्वनि बड़ी महान होती है।

**प्र. 287 जिनेन्द्र प्रभु की दिव्यध्वनि विभिन्न जीवों के लिए विविध भाषा रूप कैसे हो जाती है?**

उत्तर जिस तरह, एक प्रकार के जल का प्रवाह वृक्षों के भेद से अनेक रस रूप परिणत हो जाता है, उसी प्रकार यह वीतराग सर्वज्ञ जिनेन्द्र देव की दिव्यध्वनि एक रूप होते हुए भी विभिन्न जीव-पात्रों के भेद से विविध भाषा रूपता को प्राप्त हो जाती है।

**प्र. 288 जिनेन्द्र प्रभु की ओंकार रूप दिव्यध्वनि में द्वादशांग श्रुत रूप होने की शक्ति किस तरह निहित होती है?**

उत्तर जिनेन्द्र प्रभु की ओंकार बीजाक्षर रूप दिव्य ध्वनि (वाणी); अनन्त अर्थ है गर्भ में जिसके; ऐसे बीज पदों से निर्मित शरीरवाली होती है। जैसे-हल के द्वारा सम्यक् प्रकार से तैयार की उपजाऊ भूमि में योग्य काल में बोया गया एक भी बीज बहुत बीजों को उत्पन्न करता है, उसी तरह बीज पद- युक्त वाणी को गणधर देव बीज बुद्धि रूप ऋद्धि से अवधारण करके द्वादशांग श्रुत की रचना करते हैं।

**प्र. 289 जिनेन्द्र प्रभु की वाणी अनक्षरात्मक और अक्षरात्मक किस तरह कही गयी है?**

उत्तर जिनेन्द्र प्रभु की दिव्य ध्वनि रूप वाणी श्रोताओं के समीप पहुँचने तक अनक्षरात्मक रहती है, पश्चात् भिन्न-भिन्न श्रोताओं का आश्रय पाकर वह जिनवाणी अक्षर रूपता को धारण कर लेती है।

**प्र. 290 जिनेन्द्र प्रभु की वाणी में सत्य और अनुभय वचन किस तरह सिद्ध होता है?**

उत्तर जिनेन्द्र प्रभु-केवलज्ञानी की दिव्यध्वनि रूप वाणी उत्पन्न होते ही अनक्षरात्मक रहती है, इसलिए श्रोताओं के कर्णप्रदेश से सम्बन्ध होने के समय तक अनुभय वचन योग सिद्ध होता है। इसके पश्चात् वाणी अक्षरात्मक रूप होते हुए श्रोताओं के इष्ट अर्थों के विषय में संशय आदि का निराकरण करने से तथा सम्यग्ज्ञान को उत्पन्न करने से उसी वाणी में सत्य वचन योग का भी सद्भाव स्वत: सिद्ध हो जाता है।

**प्र. 291 जिनेन्द्र प्रभु की दिव्यध्वनि कौन-कौन से काल में कितने समय तक खिरती है?**

उत्तर जिनेन्द्र प्रभु की दिव्य ध्वनि प्रभात, मध्याह्न, सायंकाल तथा मध्यरात्रि के काल में छह-छह घटिका पर्यन्त अर्थात् दो घण्टा चौबीस मिनिट तक प्रतिदिन नियम पूर्वक खिरती है।

**प्र. 292 किन्हीं विशिष्ट पुण्यशाली आत्माओं के लिए असमय में भी क्या दिव्यध्वनि खिरती है?**

उत्तर भव्यात्माओं के लिए उनके आगमन पर या इनके द्वारा प्रश्न किये जाने पर जिनेन्द्र प्रभु की वाणी असमय में भी खिर जाया करती है। इसका कारण यह है उन विशिष्ट आत्माओं के संदेह दूर होने पर धर्मप्रभावना बढ़ेगी और उससे मोक्ष-मार्ग की देशना का प्रचार होगा जिससे तीर्थंकर का धर्म समुन्नत होगा।

**प्र. 293 बारह सभाओं में बैठकर भव्य-प्राणी जिनेन्द्र प्रभु की वाणी किस तरह विनय पूर्वक श्रवण किया करते हैं?**

उत्तर समवसरण या गंधकुटी (सामान्य अरिहंतों की सभा) सम्बन्धी बारह सभाओं में भव्य प्राणी जिनेन्द्र प्रभु की ओर मुखकर एवं हाथ जोड़कर विनीत होकर प्रभु की वाणी का श्रवण किया करते हैं न कि प्रभु की ओर पीठ कर बैठते हैं और ना ही देवी, देवतादिक आशीर्वाद की ही मुद्रा धारण करते हैं।

**प्र. 294 तीर्थंकर जिनेन्द्र प्रभु के समवसरण से विहार के समय उनके चलते हुए चरणों के नीचे देवों द्वारा कितने स्वर्णिम कमलों की रचना की जाती है?**

उत्तर तीर्थंकर जिनेन्द्र प्रभु के समवसरण-विहार के समय उनके पुण्य चरणों के नीचे देवों द्वारा आठ दिशाओं में तथा उनके अष्ट अन्तरालों में सात-सात कमल ऐसे एक सौ बारह कमल, उन सोलह स्थानों के भी सोलह अंतरालों में पूर्ववत् सात-सात कमल इस तरह एक सौ बारह कमल, इनको जोड़ने पर दो सौ चौबीस कमल हुए और प्रभु-चरणों के रखने के स्थान के नीचे एक कमल इस तरह दो सौ पच्चीस स्वर्णिम कमलों की रचना की जाती है।

**प्र. 295 तीर्थंकर ऋषभ देव से भव्यों के लिए कितने वर्षों तक समवसरण के माध्यम से दिव्यध्वनि द्वारा साक्षात् कल्याण का मार्ग प्रशस्त होता रहा?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव से भव्यात्माओं के लिए समवसरण में दिव्यध्वनि के माध्यम से एक हजार वर्ष कम एक लाख पूर्व वर्ष तक साक्षात् कल्याण का मार्ग प्रशस्त होता रहा।

**प्र. 296 तीर्थंकर ऋषभदेव का समवसरण छोड़ने के उपरान्त मोक्ष प्राप्ति के मध्य कितना काल कैलाश पर्वत पर उत्कृष्ट ध्यान मुद्रा में व्यतीत हुआ?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव का समवसरण छोड़ने के उपरान्त मोक्ष-प्राप्ति के मध्य चौदह दिवस पर्यंत का काल कैलाश (अष्टापद) पर्वत पर उत्कृष्ट ध्यान (योग) मुद्रा में व्यतीत हुआ।

**प्र. 297 तीर्थंकर ऋषभदेव मोक्ष जाने के दो दिन पूर्व जब पद्मासन में योग निरोध करने हेतु अष्टापद पर्वत पर विराजित हुए तब प्रभु के मोक्ष जाने के संकेत स्वरूप भरत चक्रवर्ती ने कौन-सा स्वप्न देखा?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के मोक्ष जाने के पूर्व भरत चक्रवर्ती ने शुभ और मंगल स्वरूप स्वप्न देखा कि- महा मंदराचल (सुमेरु पर्वत) वृद्धि को प्राप्त होता हुआ प्राग्भार पृथ्वी (सिद्धशिला) तक पहुँच गया है।

**प्र. 298 तीर्थंकर ऋषभदेव के मोक्षोपरांत चतुर्णिकाय के देवों ने प्रभु का निर्वाण कल्याणक किस तरह मनाया था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव के मोक्षोपरांत बड़ी भक्ति को धारण करने वाले आलस्य विरहित इन्द्रों सह चतुर्णिकाय के देव आये और प्रभु की अत्येष्टि अर्थात् अन्तिम पूजा कर उनके पवित्र, उत्कृष्ट, मोक्ष के साधन स्वरूप स्वच्छ तथा निर्मल शरीर को उत्कृष्ट मूल्यवान पालकी (आसन) में विराजमान कर अग्निकुमार नामक भवनवासी देवों के इन्द्र के रत्नों की कान्ति से दैदीप्यमान अत्यन्त उन्नत मुकुटानल, और चन्दन, अगर, कपूर केशरादि सुगन्धित पदार्थों से तथा घृतादि के द्वारा वृद्धि को प्राप्त अग्नि से लोक में अनुपम सुगन्धि को व्याप्त करते हुए प्रभु के उस शरीर को शुद्धाग्नि संस्कार द्वारा

भस्मरूप पर्यायान्तर को प्राप्त करा दिया था। तदनन्तर देवों और देवेन्द्रों ने भक्ति पूर्वक पञ्चकल्याणक प्राप्त तीर्थंकर जिनेन्द्र की देह-भस्म को लेकर 'हम भी ऐसे हों' यही विचार करते हुए उस भस्म को अपने मस्तक, भुजायुगल, कण्ठ तथा छाती में लगाकर अत्यन्त पवित्रता का अनुभव करते हुए धर्मरस में डूबकर निर्वाण कल्याणक को सानंद मनाया था।

**प्र. 299 तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के साथ कितने महामुनियों ने निर्वाण ( मोक्ष )-पद को प्राप्त कर सिद्धालय की ओर गमन किया था?**

उत्तर तीर्थंकर ऋषभदेव मुनीश्वर के साथ एक हजार महामुनियों ने निर्वाण-पद को प्राप्त कर सिद्धालय (लोकशिखर) की ओर गमन किया था।

**प्र. 300 तीर्थंकरों की अनुपम सामर्थ्य या अतुल बल का स्थूल दृष्टान्त दीजिये?**

उत्तर अनन्त बल युक्त तीर्थंकरों की अनुपम सामर्थ्य की कल्पना करना अल्पज्ञों को शक्य नहीं, फिर भी स्थूल दृष्टान्त द्वारा विचार करते हैं कि- हजारों हाथियों का बल एक सिंह में होता है और हजारों सिंहों का बल एक शरभ (शार्दूल) में होता है। हजारों शरभों का बल एक बलदेव में होता है। दो बलदेवों की शक्ति एक अर्धचक्री (नारायण) में रहती है। दो अर्धचक्रवर्तियों का बल एक नरेन्द्र चक्रवर्ती में होता है। एक हजार चक्रवर्तियों का बल एक इन्द्र में होता है और असंख्य इन्द्रों के बल से भी अधिक शक्ति एक तीर्थंकर में होती है। वास्तव में तीर्थंकरों के जन्म से ही अतुल बल या अप्रतिम वीर्यता नामक एक अतिशय-गुण होता है इतदर्थ उनके बल की तुलना विश्व की किसी शक्ति से नहीं की जा सकती है।

मुनि श्री 108 भाग्यसागर जी महाराज
मुनि श्री 108 महत् सागर जी
वेदक - सकल दिगम्बर

# आगम-अनुयोग

भाग-1

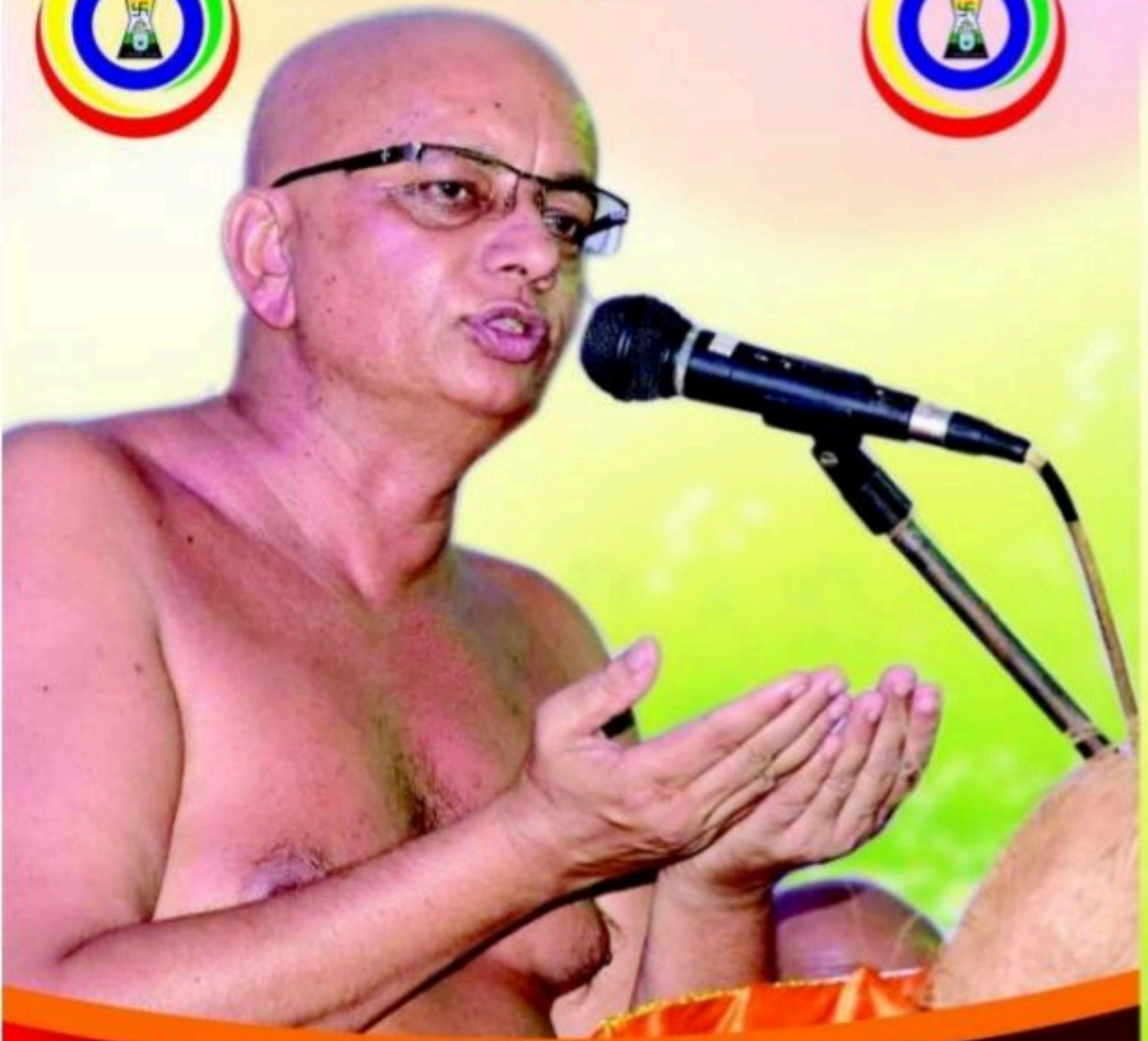

रचयिता-आचार्यश्री 108 आर्जवसागर